THE TIMES OF INDIA

***Date: 14-03-18***

# A quota for women

## *This is one big idea awaiting implementation by the Modi government*

***Baijayant 'Jay' Panda is a BJD Lok Sabha MP.***

For nearly a quarter of a century, every union government till the present one has unsuccessfully attempted to enact a women's reservation bill for quotas in Parliament and state assemblies. The governments of Prime Ministers HD Deve Gowda, AB Vajpayee and Manmohan Singh each introduced the bill once or more.Only the tenure of IK Gujral did not see such an attempt, but that was essentially a continuation of the same United Front government that had done so under Deve Gowda, with a change of PM. As the Modi government's first term enters its last lap, the issue is again gaining traction. Will he give it a shot as well? What are the bill's merits and, just as relevant, its political viability?

Though reservations in India have had a mixed track record, and continue to be a source of contentious politics, they have also played a role in challenging age old social barriers. Nevertheless, pleas to modify reservations, such as limiting it to one generation of beneficiaries, rigidly excluding the more affluent "creamy layer" among them, and exclusion from highly technical disciplines, are all worthy of debate.But what is undeniable is that the status of women in India, who as a category far surpass the numbers of any other group facing discrimination, continues to lag well behind global norms. From the womb onwards, women still have it rough in the world's second most populous nation. Despite anti-sex selection laws, and some improvement in recent years, the gender ratio remains skewed with fewer female than male births.

Indian women's lives are burdened by low literacy (59% vs a national average of 74%); even lower levels of financial inclusion (42% vs developed countries' averages approaching 100%); and shockingly low participation in the workforce (only 28% compared to even South Asian neighbour Bangladesh's 45%). Similarly, the percentage of women elected to Lok Sabha, at just under 12%, is about half the global average of 23%.However, the share of women legislators is not necessarily correlated to a nation's gender equity. Consider three examples from developed, Western democracies, in other words the types of nations generally hailed for relatively better, if not quite equal, status of women. The US has only 19% women in its lower house, the UK 30%, and Sweden 45%.

Sweden is the only one of those three nations with a law promoting women in politics, but by regulating parties rather than parliament. Its 1971 law, when its share of women legislators was 14%, stipulates a women's quota of 40% of all party candidatures. This is an alternative also mooted by some in India, with a 33% quota of party tickets.

That is not to say quotas for women in state and national elections would by itself be a panacea for gender rights. In fact, starting from freedom fighter Sarojini Naidu till now, several prominent women have spoken against it. And many activists give equal or more emphasis to other building blocks of gender equity, especially to boost women's participation in the workforce. That approach is also supported by studies which indicate a strong correlation between more working women and better gender equity.Programmes like the Beti Bachao Beti Padhao campaign championed by the PM, as well as a growing number of individual success stories, are also gradually stigmatising discrimination. The latter include women fighter pilots, auto rickshaw drivers, sporting stars, CEOs, entrepreneurs and many more. However, attitudinal changes in society take a long time. So, notwithstanding governmental programmes and individual successes, a sharp improvement in the medium term will require additional intervention.

Quotas for women in local body elections have been in place for years. Observing the impact of that on the ground is eye opening. On the one hand, many a woman sarpanch or Zilla Parishad member is just a rubber stamp, with a male relative wielding the real authority. I have personally witnessed, on the other hand, several such elected women come into their own, handling the hurly burly of politics themselves, and with aplomb. Such women are influencing others, and changing societal attitudes.That is why i believe quotas for women could be transformational for India's politics, society and economy, especially if the proposed sunset clause after 15 years could actually be hardwired. Some sceptics worry that that would not be the case, as with other reservations, but even then, the impact of higher numbers of women in Parliament and assemblies would have an overwhelmingly positive impact.The rationale apart, the political will for it has never been enough to overcome opposition. Furthermore, Prime Minister Narendra Modi has been seeking transformational change through mega persuasion campaigns instead of by legislation, for example the exhortations of the Swachh Bharat programme, rather than emulating Singapore's harsh punishments for littering. Presumably, PM's similar exhortations on gender equity could be construed as his preferred alternative to quotas.But he is also known to spring surprises. And considering the potentially huge political benefits from co-opting a big women's issue, it should not be ruled out. Despite the fact that it is UPA chairperson Sonia Gandhi who has again spoken up for it, this government has a demonstrated track record of pushing through, and thus gaining credit for, big ideas that had been gridlocked for decades.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

***Date: 14-03-18***

# श्रमशक्ति में महिलाओं की मौजूदगी बढ़ाना आसान नहीं

**श्यामल मजूमदार**

पूरी दुनिया ने पिछले ही सप्ताह अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाया है। इसी दौरान भारत के लिए एक अच्छी खबर सामने आई। संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ) की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में बाल विवाह की जद में आने वाली लड़कियों की संख्या पिछले दशक में काफी कम हुई है।पिछले10 वर्षों में बाल विवाह की घटनाओं में सर्वाधिक कमी दक्षिण एशिया में देखी गई है। भारत के बड़े इलाकों में प्रगति होने से 18 साल से कम उम्र में लड़कियों की शादी के मामले एक तिहाई से भी कम हो चुके हैं। वैसे यह सच है कि अब भी भारत में 27 फीसदी लड़कियों की शादी वयस्क होने से पहले ही हो जाती है लेकिन एक दशक पहले के 47 फीसदी अनुपात को देखते हुए यह बड़ी गिरावट कही जाएगी।

दूसरी अच्छी खबर मॉन्स्टर वेतन सूचकांक (एमएसआई) के रूप में सामने आई। इसके मुताबिक भारत में पुरुष एवं महिला कर्मचारियों को मिलने वाले वेतन का अंतर वर्ष 2017 में पांच फीसदी तक कम हुआ जबकि 2016 में यह फासला 24.8 फीसदी तक था।दोनों ही खबरें काफी अच्छी हैं और उनमें उम्मीद की किरण भी नजर आती है। लेकिन गहराई से देखने पर तस्वीर थोड़ी धुंधली हो जाती है। मसलन, एमएसआई रिपोर्ट में कहा गया है कि अनुभवी कर्मचारियों के मामले में पुरुष एवं महिला के आधार पर वेतन का फर्क काफी बढ़ चुका है। हालत यह है कि 11 साल से अधिक अनुभव रखने वाले पुरुष एवं महिला कर्मचारियों के वेतन में 25 फीसदी का अंतर देखा जाता है।दो साल तक का अनुभव रखने वाले पुरुष कर्मचारी समकक्ष महिला कर्मचारियों की तुलना में 7.8 फीसदी अधिक वेतन पाते हैं और छह से 10 साल तक का अनुभव रखने वाले कर्मचारियों के मामले में यह अंतर 15.3 फीसदी का है। लैंगिक आधार पर होने वाले इस भेदभाव की वजह से पुरुष अपने घरों से बाहर निकलकर वेतनभोगी कर्मचारी बनना पसंद करते हैं जबकि महिलाओं के लिए यह घरों के भीतर रहकर घरेलू कामकाज करने का कारक बन सकता है।जहां तक नाबालिग लड़कियों की शादी में गिरावट का जिक्र करने वाली यूनिसेफ रिपोर्ट का सवाल है तो वह विश्व आर्थिक मंच की 'वैश्विक लिंग-अंतराल रिपोर्ट 2017' की तुलना में हमें जमीनी सच्चाई से परे ले जाती है। विश्व आर्थिक मंच की रिपोर्ट में भारत को 144 देशों में से 108वें स्थान पर रखा गया है जबकि 2016 में भारत लिंग के आधार पर फर्क के मामले में 87वें स्थान पर मौजूद था।

कुल श्रमशक्ति में महिलाओं की भागीदारी के मामले में भारत दक्षिण एशिया में पाकिस्तान के बाद सबसे खराब स्थिति में है। अर्थव्यवस्था बढऩे से महिलाओं के लिए अतिरिक्त रोजगार अवसर सृजित होने के बजाय भारत में महिला रोजगार पीछे की तरफ जा रहा है। वर्ष 2017 में 15 साल से अधिक उम्र वाली श्रमशक्ति में महिलाओं की हिस्सेदारी 27 फीसदी पर आ गई जबकि दो दशक पहले यह अनुपात 35 फीसदी हुआ करता था।राष्ट्रीय नमूना सर्वे (एनएसएस) के आंकड़ों से पता चलता है कि श्रमशक्ति में 25-54 वर्ष

उम्र वाली महिलाओं की भागीदारी शहरी इलाकों में 26-28 फीसदी के दायरे में स्थिर हो गई है जबकि ग्रामीण इलाकों में इस समूह की हिस्सेदारी 2011 में घटकर 44 फीसदी हो गई थी जो 1987 में 57 फीसदी हुआ करती थी। विभिन्न उम्र समूहों या विभिन्न सर्वेक्षणों में कमोबेश यही कहानी सामने आ रही है।भारत सरकार की वार्षिक आर्थिक समीक्षा में भी मां-बाप के बीच 'बेटे को प्राथमिकता' संबंधी धारणा का जिक्र किया गया है। इसके मुताबिक भारतीय दंपती अपने परिवार में बेटों की मनचाही संख्या पूरी होने तक बच्चे पैदा करना जारी रखते हैं। आर्थिक समीक्षा के मुताबिक भारत में 25 साल तक की उम्र वाली करीब 2.1 करोड़ अनचाही लड़कियां हैं। इसकी वजह यह है कि उनके माता-पिता ने बेटे की चाह में अनचाही बेटियों को पैदा करना जारी रखा।भले ही सर्वे में कहा गया है कि पिछले डेढ़ दशक में भारत की स्थिति 17 में से 14 मानदंडों में बेहतर हुई है। महिला सशक्तीकरण की स्थिति का जायजा लेने के लिए ये मानदंड तय किए गए हैं। सच तो यह है कि लड़कियों की तुलना में लड़कों को तरजीह देने वाले सामाजिक-सांस्कृतिक मानक, महिलाओं की आवाजाही पर रोक लगाने वाले पितृसत्तात्मक मूल्य और महिलाओं को काम करने से रोकने वाली लैंगिक सोच के चलते भारत में लिंग के आधार पर भेदभाव को बढ़ावा मिलता है।

यह एक ऐसी समस्या है जो भारत के कॉर्पोरेट जगत में शीर्ष स्तर पर भी देखी जाती है। कंपनियां भले ही इसे स्वीकार न करें लेकिन सच तो यही है कि वे महिलाओं को नौकरी देने पर लगने वाली लागत का पूरा ध्यान रखती हैं। खास बात यह है कि पुरुष कर्मचारियों को नौकरी देते समय कंपनियां लागत पर इस कदर ध्यान नहीं देती हैं। इसकी मूल वजह वह मान्यता है कि अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियां निभाने के लिए महिलाएं बीच में ही नौकरी छोड़ देंगी। कंपनियों का मानना है कि बीच में ही नौकरी छोडऩे से इन महिला कर्मचारियों के प्रशिक्षण पर किए गए निवेश का उन्हें पूरा प्रतिफल नहीं मिल पाता है। इतना ही नहीं, कंपनी को उस महिला कर्मचारी की जगह नए कर्मचारी को नौकरी पर रखने का खर्च भी उठाना पड़ता है। कंपनियां इस प्रवृत्ति को 'मॉमी ट्रैक' कहकर पुकारती हैं।यही कारण है कि बच्चे के जन्म एवं देखभाल के लिए स्वीकृत मातृत्व अवकाश की अवधि समाप्त होने के बाद जब बढिय़ा प्रदर्शन करने वाली महिला कर्मचारी भी दोबारा काम पर लौटना चाहती हैं तो उनकी राह कहीं अधिक दुश्वार हो चुकी होती है। दरअसल उनके अनुभव के हिसाब से नौकरियां कम होती हैं और उन्हें मिलने वाला वेतन भी तुलनात्मक रूप से कम होता है।

---

***Date: 14-03-18***

# कौन चाहे सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सुधार!

**देवाशिष बसु**

सरकारी क्षेत्र के बैंक हर कुछ महीने में खबरों में बने रहते हैं। उनके बारे में जो खबरें आती हैं उनमें तमाम खबरें उनके भारी भरकम घाटे से जुड़ी होती हैं। 5 या 10 अरब रुपये के तिमाही घाटे की खबरें तो अब आम हो चुकी हैं। दूसरी तरह की खबरों का ताल्लुक बड़े घोटालों या कहें ऋण डिफॉल्ट से संबंधित होती हैं।उदाहरण के लिए 50 अरब रुपये का घोटाला जिसमें विनसम डायमंड्स के हाई प्रोफाइल प्रवर्तक सावधानीपूर्वक पैसा इधर-उधर कर गायब हो गए या फिर 127 अरब रुपये का वह घोटाला जिसमें आभूषण कारोबारी नीरव मोदी और उनके मामा मेहुल चौकसी फरार हो गए। तीसरी तरह की खबर वह होती है जो उपरोक्त दोनों की प्रतिक्रिया स्वरूप सामने आती है। उदाहरण के लिए बैंकों का पुनर्पूंजीकरण, बैंकों के शीर्ष प्रबंधन की नियुक्ति प्रक्रिया में बदलाव या निगरानी व्यवस्था में बदलाव आदि।इन खबरों को लेकर लोगों के मन में एकबारगी आश्चर्य और गुस्सा पैदा होता है, इसे लेकर चर्चा होती है और फिर ये खबरें शांत पड़ जाती हैं। इसके साथ ही सुधारों को लेकर उपजा शोर भी शांत हो जाता है। सरकारी बैंक उसी पुराने ढर्रे पर चलते रहते हैं।

अगर हमें सार्वजनिक धन की इस लूट के लिए किसी को जिम्मेदार ठहराना हो और किसी पर जवाबदेही डालनी हो तो आखिर यह जवाबदेही किस पर थोपी जाए?

**मेरी नजर में इसके लिए इन तीनों को जिम्मेदार माना जाना चाहिए:**

बैंक प्रबंधन और आरबीआई: इतने बड़े पैमाने पर फंसा हुआ कर्ज बताता है कि आधारभूत बैंकिंग का ढांचा ही चरमरा चुका है। बैंक अधिकारियों ने बगैर पर्याप्त जोखिम का आकलन किए जमकर ऋण बांटा। यह काम कंपनियों के प्रवर्तकों के साथ मिलीभगत के साथ किया गया। याद रहे कि बैंकिंग देश में सबसे अधिक विनियमित कारोबार में से एक है।रिजर्व बैंक और वित्त मंत्रालय के तमाम काबिल लोग हर सरकारी बैंक के बोर्ड की शोभा बढ़ाते हैं। बैंकों को दर्जनों अंकेक्षण और अनुपालन मानकों का पालन करना पड़ता है। समवर्ती अंकेक्षण, आंतरिक अंकेक्षण, सांविधिक अंकेक्षण और आरबीआई अंकेक्षण इसके उदाहरण हैं।

रिपोर्ट के मुताबिक पंजाब नैशनल बैंक जिसमें 127 अरब रुपये का घोटाला बहुत आसानी के साथ अंजाम दिया गया वहां ऋण के अंकेक्षण, जोखिम के आंतरिक अंकेक्षण, राजस्व अंकेक्षण, सूचना व्यवस्था का अंकेक्षण, आकस्मिक अंकेक्षण, क्षेत्रवार अंकेक्षण, अनुपालन अंकेक्षण, विधिक अंकेक्षण और विदेशी विनिमय प्रबंधन अधिनियम के तहत अंकेक्षण आदि की व्यवस्था है। इन सबके बावजूद न तो धोखाधड़ी रुकी और न ही फंसे हुए कर्ज की समस्या कम हुई। ऐसा इसलिए कि किसी बैंकिंग या नियामकीय अधिकारी ने कभी उनको जिम्मेदार ही नहीं ठहराया। जाहिर है यह पूरा समूह सरकारी बैंकों के सुधार को लेकर कतई रुचि नहीं रखता।

**वित्त मंत्रालय की नौकरशाही:**

भारत में बदलाव नौकरशाही के जरिये भी आ सकता है यानी पारंपरिक नीति निर्माताओं द्वारा। बैंकिंग और वित्त क्षेत्र में यह विभाग है वित्तीय सेवा विभाग। इसकी निगरानी छह सचिवों, दो अतिरिक्त सचिवों, दो आर्थिक सलाहकारों और एक उपमहानिदेशक के जिम्मे होती है। लोकरंजन संभवत: छह संयुक्त सचिवों में वरिष्ठतम हैं। उनके पास व्यापक जिम्मेदारियां हैं। इनमें वित्तीय समावेशन, कारोबारी प्रतिनिधि, मोबाइल बैंकिंग, ई-गवर्नेंस, ई-भुगतान, प्वाइंट ऑफ सेल और प्रीपेड कार्ड, जिला और राज्य स्तरीय बैंकर समितियां, प्रमुख बैंक योजनाएं, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण, भुगतान नियामक बोर्ड और बैंकिंग नेटवर्क विस्तार आदि शामिल हैं।रंजन ने अगस्त 2017 में कार्यभार संभाला और तत्काल बैंक ऑफ बड़ौदा के निदेशक बन गए। वित्तीय क्षेत्र विशेषज्ञता की मांग करता है जबकि विभागीय अधिकारियों के पास वह नहीं होती। श्री रंजन का पिछला काम त्रिपुरा के पर्यटन विभाग के प्रधान सचिव का था।

पंकज जैन एक अन्य योग्य संयुक्त सचिव हैं। वह प्रधानमंत्री मुद्रा योजना और स्टैंड अप इंडिया योजना के लिए उत्तरदायी हैं। वह केनरा बैंक के निदेशक रहे हैं और अब आईडीबीआई बैंक के बोर्ड में हैं। इन दोनों बैंकों का नाम घोटालों में शमिल है। हमारे देश में शायद बैंकिंग और वित्तीय जगत की प्रतिभाएं दुर्लभ हैं और उन्हें केवल भारतीय प्रशासनिक सेवा में ही पाया जा सकता है। यही वजह है कि उन्हें इंडिया इन्फ्रास्ट्रक्चर फाइनैंस कंपनी लिमिटेड का उत्तरदायित्व भी सौंपा गया है। उनकी पिछली पदस्थापना मेघालय सरकार के सचिव के रूप में थी।

अमित अग्रवाल तीसरे संयुक्त सचिव हैं। वह बैंकिंग परिचालन और लेखा, औद्योगिक संबंध, रिकवरी, बैंकों के निदेशक मंडल से जुड़ी शाखा, कोर बैंकिंग सॉल्युशन से जुड़े मुद्दों, सरकारी बैंकों के कंप्यूटरीकरण, साइबर सुरक्षा आदि का काम संभालते हैं। वह छत्तीसगढ़ सरकार के वित्त सचिव थे। इनके अलावा शिक्षा ऋण और विद्या लक्ष्मी पोर्टल के लिए संयुक्त सचिव हैं, वस्तु एवं सेवा कर इकाई, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, कृषि ऋण, पेंशन सुधार और फंसे हुए कर्ज तथा केंद्रीकृत केवाई के लिए भी संयुक्त सचिव हैं।

ये सब शीर्ष स्तर के मस्तिष्क हैं जो मेहनत से काम करते हैं लेकिन शायद ही कभी नतीजों में कोई अंतर ला पाए हों। जबकि लोकतांत्रिक पूंजीवाद में नतीजे अहम हैं। **उपभोक्ताओं** के लिए सस्ती और आसान पूंजी सुनिश्चित करानी होगी वह भी वित्तीय क्षेत्र के कारोबारियों के बीच प्रतिस्पर्धा और क्षमता बढ़ाकर। क्या वे सरकारी बैंक सुधार में रुचि रखते हैं? बीते दो दशक के दौरान उनके काम का विस्तार हुआ है लेकिन इस दौरान उनका घाटा भी लगातार बढ़ता जा रहा है।

**राजनेता:**

असली शक्ति नेताओं के पास ही है क्योंकि वे कानून बदल सकते हैं। इसके बावजूद सरकारी बैंकों **की** गड़बड़ी के लिए उन्हें सीधे उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। इसमें बैंकों पर कमजोर कारोबारी संस्थानों को ऋण देने के लिए दबाव बनाने से लेकर शीर्ष स्तर पर गलत नियुक्तियों तक के आरोप लगते रहे हैं। **क्या** वे सरकारी बैंकों के सुधार में रुचि रखते हैं? ऐसा सोचना भी हास्यास्पद है।यकीनन मौजूदा बैंकिंग संकट का अंत भी वैसा ही होगा जैसा कि हम देखते आए हैं। हमें अंतहीन बहस देखने को मिलेंगी, व्यवस्था को लेकर बात होगी, अंकेक्षण का जिक्र आएगा और यह बात चलेगी कि क्या शीर्ष प्रबंधन इससे अवगत रहा होगा। ये सब बातें बेकार है क्योंकि जो लोग बहस कर रहे हैं वे कोई बदलाव नहीं ला सकते। जो बदलाव ला सकते हैं उनके हित यथास्थिति बरकरार रखने से ही सधते हैं।

---

दैनिक जागरण

***Date: 14-03-18***

# अमेरिका के लिए संरक्षण की नीति लाभप्रद है तो यह भारत के लिए भी फायदेमंद साबित होगी

**डॉ. भरत झुनझुनवाला**

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने वाशिंग मशीन और सौर ऊर्जा के पैनलों पर अतिरिक्त कर लगा **दिया** है। अमेरिकी उत्पादकों ने शिकायत की थी कि दूसरे देशों द्वारा सस्ता माल बेचे जाने के कारण उनका धंधा ठप हो रहा है। इसके बाद उन्होंने स्टील और एल्युमीनियम पर भी क्रमश: 25 एवं 10 **प्रतिशत** अतिरिक्त कर लगा दिया है। इन आयात करों का भारत पर सीधा प्रभाव कम ही पड़ेगा। मेरिका द्वारा आयातित स्टील और **एल्युमीनियम** में भारत का हिस्सा मात्र 2 प्रतिशत है, परंतु पूरी आशंका है कि यह नीति फैलती ही जाएगी और विश्व व्यापार का संकुचन होगा। तब भारत के तमाम निर्यात जैसे बासमती चावल और गलीचे भी संरक्षणवाद की चपेट में आ जाएंगे। इसलिए हमें अपनी **नीतियां** तत्काल दुरुस्त कर लेनी चाहिए।

**व्यापार मामले में अमेरिकी नीति बदली**

अमेरिका अब तक खुले विश्व व्यापार का **पक्षधर** रहा है, लेकिन अब परिस्थितियां बदल गई हैं। नब्बे के दशक में अमेरिका में विंडोज सॉफ्टवेयर, इंटरनेट, जीन परिवर्तित कपास के बीज, कैंसर रोधी दवाओं आदि का ईजाद हो रहा था। 1996 में जब मैं अमेरिका गया था तो डेस्कटॉप कंप्यूटर के लिए डायल-अप मोडेम लेकर आया था। इन नई हाइटेक सामग्री के उत्पादन में अमेरिका में रोजगार के वसर सृजित हो रहे थे। फलस्वरूप अमेरिका में **श्रमिकों** के वेतन ऊंचे थे। इन ऊंचे वेतनों के कारण वहां कपड़े और कारों के उत्पादन की

लागत ज्यादा आ रही थी। भारत के कपड़े और चीन की कार सस्ती पड़ती थी। इसलिए उस समय खुला विश्व बाजार अमेरिका के लिए दोहरे लाभ का सौदा था। मॉनसेंटों जैसी कंपनियों को भारत में जीन परिवर्तित कपास के बीज बेचने का वसर मिल रहा था, साथ ही भारत में बने सस्ते कपड़े अमेरिकी उपभोक्ताओं को उपलब्ध हो रहे थे।

## हाइटेक रोजगार में आई कमी

आज परिस्थिति बदल गई है। विंडोज सॉफ्टवेयर जैसा दूसरा क्रांतिकारी आविष्कार अमेरिका में नहीं हुआ है। जीन-परिवर्तित बीज बनाने जैसी तकनीक का फैलाव हो गया है और आज हमारी कंपनियां भी इनका उत्पादन करने लगी हैं। अमेरिका के हाइटेक उत्पादों का निर्यात कम हुआ है। इन हाइटेक क्षेत्रों में अमेरिका में रोजगार नहीं बन रहे हैं। वेतन कम होने के कारण विनिर्माण गतिविधियों का भी मेरिका से भारत और चीन को स्थानांतरण हो चुका है। अमेरिकी नागरिक पस्त हैं। ट्रंप ने वाशिंग मशीन आदि पर आयात कर बढ़ाए हैं जिससे इन वस्तुओं का उत्पादन वापस अमेरिका की और लौटे और इनके उत्पादन से अमेरिका में रोजगार उत्पन्न हों। जब तक अमेरिका में नए क्रांतिकारी उत्पादों का आविष्कार नहीं होता तब तक अमेरिका में हाइटेक माल के उत्पादन में रोजगार नहीं बनेंगे और अमेरिकी सरकार का झुकाव अपने उद्योगों को संरक्षण देने का होगा। फिलहाल यही संकेत नजर आ रहे हैं कि यह नीति ही आगे जोर पकड़ेगी।

## किसानों की स्थिति भी खराब

इस पृष्ठभूमि में अमेरिकी संरक्षणवाद का हम भारत पर प्रभाव का आकलन कर सकते हैं। मेरे आकलन में नब्बे के दशक में भारत द्वारा खुले विश्व व्यापार को अपनाना नुकसानदेह रहा। बीते 20 वर्षो के दौरान देश में संगठित क्षेत्र में रोजगार घटे हैं और किसान की स्थिति और खराब हुई है। छोटे उद्योग चीन के सस्ते माल से परेशान हुए हैं। श्रमिक की दिहाड़ी अवश्य बढ़ी है, परंतु इसका श्रेय मनरेगा को जाता है, न कि खुले विश्व व्यापार को। यह दुरूह स्थिति तब पैदा हुई है जब अमेरिका द्वारा खुले व्यापार को बढ़ावा दिया जा रहा था। अमेरिकी विदेशी निवेश आ रहा था और अमेरिका से हमारे निर्यात बढ़ रहे थे। जिस प्रकार गांव में नहर का पानी आने के बाद भी किसान आत्महत्या कर रहे हैं उसी प्रकार विदेशी निवेश आने और भारत के कपड़ों का निर्यात बढ़ने के बावजूद भारतीय नागरिक परेशान है। ट्रंप द्वारा संरक्षण की नीति पनाने से हमारी परिस्थिति और विकट हो जाएगी। नहर में पानी आना भी बंद हो जाए तो पहले से ही पस्त किसान पूर्णतया धराशायी हो जाता है।

## विदेशी निवेश के प्रति कड़ा रुख

ट्रंप की संरक्षणवादी नीति से अमेरिकी कंपनियों में उत्साह है। ट्रंप ने कारपोरेट टैक्स की दर भी कम कर दी है जिससे मेरिकी कंपनियां वापस पने वतन वापसी कर रही हैं। अमेरिका में ब्याज दरों में वृद्धि हुई है। परिणामस्वरूप विदेशी निवेशकों को पने ही घर में समुचित आय मिल रही है। उनका विदेशी निवेश के प्रति रुख कड़ा हुआ है। आने वाले समय में हमें विदेशी निवेश कम ही मिलने की संभावना है। ट्रंप द्वारा आयात कर बढ़ाने से हमारे निर्यात भी दबाव में आएंगे। वर्तमान में ये आयात कर चुनिंदा माल जैसे वाशिंग मशीन और स्टील पर बढ़ाए गए हैं, परंतु इनका विस्तार सुनिश्चित है। स्टील पर आयात कर बढ़ाने से अमेरिका में स्टील का दाम बढ़ जाएगा। स्टील का बर्तन बनाने वाली मेरिकी कंपनी को महंगा स्टील खरीदना होगा। अमेरिकी बर्तन महंगा हो जाएगा। चीन में बने स्टील के बर्तन के सामने मेरिकी बर्तन निर्माता खड़ा नहीं हो सकेगा। इसलिए ट्रंप को धीरे-धीरे अन्य तमाम वस्तुओं पर भी आयात कर बढ़ाने होंगे। जिस प्रकार केवल उत्तम कोटि का उर्वरक डालने से फसल उत्तम नहीं हो जाती। इसके साथ उत्तम बीज, सिंचाई आदि की भी जरूरत होती है, वैसे ही केवल स्टील पर आयात कर बढ़ाने से अमेरिकी अर्थव्यवस्था में सुधार नहीं होगा।

**भारत ले सीख**

स्पष्ट होता है कि खुले विश्व व्यापार के **अमेरिकी** नागरिकों पर दो विपरीत प्रभाव पड़ रहे हैं। इससे अमेरिकी श्रमिक के रोजगार का हनन हो रहा है। जैसे अमेरिकी वाशिंग मशीन **निर्माता** के धंधे के ठप होने में दिखता है जबकि **अमेरिकी** उपभोक्ता को सस्ती वाशिंग मशीन मिल रही है। ट्रंप को चयन करना था **कि** वह अपने नागरिक के रोजगार को बचाएं थवा उसे **सस्ती** वाशिंग मशीन दिलवाएं। उन्होंने रोजगार को बचाने का निर्णय लिया है जो मेरी समझ से सही है। दुकान के शो केस में रखी **वाशिंग** मशीन किस काम की यदि जेब में उसे खरीदने के लिये रकम न हो। **हमारी** स्थिति अमेरिकी जैसी ही है। जिस प्रकार अमेरिकी **वाशिंग** मशीन निर्माता चीन में बनी वाशिंग मशीन से त्रस्त थे उसी प्रकार भारत में खिलौने और एलईडी लाइट के निर्माता चीन के माल से त्रस्त हैं। यदि ट्रंप ने अमेरिकी वाशिंग मशीन के उत्पादन को बचाने के लिए आयात कर बढ़ाने का निर्णय लिया है तो **क्या** भारत को अपने खिलौना निर्माताओं को बचाने के लिए आयात कर नहीं बढ़ाना होगा?

वास्तव में हमारे लिए संरक्षण को अपनाना **ज्यादा** जरूरी है, क्योंकि हम पर घटते विदेशी निवेश और **निर्यातों** की मार भी पड़ेगी। ट्रंप के संरक्षणवाद से विश्व पूंजी का पलायन **अमेरिका** की ओर होगा। भारत को विदेशी निवेश भी कम **मिलेगा** और भारत की पूंजी भी मेरिका का रुख करेगी। ट्रंप द्वारा वाशिंग मशीन पर आयात कर बढ़ाने से भारत के लिए कपड़ों का निर्यात करना भी कठिन हो जाएगा। यदि अमेरिका के लिए संरक्षण की **नीति** लाभप्रद है तो भारत के लिए और भी ज्यादा फायदेमंद है। हमें तत्काल चेतना चाहिए। हमारी नहर का पानी आना बंद ही नहीं हो गया है, बल्कि वह उल्टा बहने लगा है। खुले व्यापार से देश की चुनिंदा बड़ी कंपनियों को लाभ हो सकता है, देश के आम नागरिक को **नहीं**।

---

Live हिन्दुस्तान .com

***Date: 13-03-18***

# विशेष राज्य की बहस को आंध्र से मिली नई जमीन

**के सी त्यागी वरिष्ठ जद-यू नेता (ये लेखक के अपने विचार हैं)**

केंद्र द्वारा आंध्र प्रदेश को विशेष राज्य का **दर्जा** देने से इनकार करने पर तेलुगु देशम पार्टी के दो **मंत्रियों** का केंद्रीय मंत्रिमंडल से इस्तीफा एक बड़ी राजनीतिक घटना बनी। **हालांकि** चंद्रबाबू नायडू का दल अब भी एनडीए में बना रहेगा, लेकिन चुनावी तैयारियों के बीच लिया गया यह निर्णय वर्ष 2019 के लोकसभा और उससे भी ज्यादा स्थानीय विधानसभा चुनावों के मद्देनजर लिया गया फैसला प्रतीत होता है। केंद्र से विशेष सहयोग की मांग **किसी** भी राज्य का अधिकार है और केंद्र भी आवश्यकता के अनुसार जरूरतमंद राज्यों की मदद को प्रतिबद्ध है। फिलहाल केंद्र ने यह कहकर इसे ठुकरा दिया है कि वह पूर्वोत्तर के तीन व पहाड़ी राज्यों के अलावा किसी अन्य राज्य को विशेष राज्य का दर्जा नहीं दे सकता। तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने 'आंध्र प्रदेश रिऑर्गनाइजेशन एक्ट 2014' पर बहस के दौरान प्रदेश को पांच वर्षों के लिए विशेष दर्जे की बात जरूर कही थी, पर आंध्र प्रदेश विभाजन एक्ट में विशेष दर्जे की शर्त नहीं रखी गई।ताजा हालात में विशेष **राज्य** के दर्जे के प्रावधानों को समझने की जरूरत है। भारतीय संविधान में किसी राज्य को विशेष दर्जे का प्रावधान नहीं है, लेकिन बाद में संसाधन विहीन राज्यों को विशेष राज्य का दर्जा देने का निश्चय हुआ। नेशनल डेवलपमेंट काउंसिल द्वारा कई तथ्यों जैसे पहाड़ी एवं दुर्गम क्षेत्र, कम जनसंख्या घनत्व वाला क्षेत्र, **प्रति** व्यक्ति आय व गैर कर

राजस्व में कमी वाले राज्यों तथा आदिवासी बहुल इलाके समेत अंतरराष्ट्रीय सीमा से जुड़े क्षेत्र के आधार पर इस श्रेणी के राज्यों की पहचान की गई। तीसरी पंचवर्षीय योजना तक ऐसे राज्यों के लिए विशेष सुविधा का कोई निश्चित मानक नहीं था। 1969 में पांचवें वित्त आयोग द्वारा गाडगिल फॉर्मूले के तहत जम्मू-कश्मीर, नगालैंड और असम को उपर्युक्त आधार पर विशेष राज्य का दर्जा दिया गया। बाद में इन्हीं आधारों पर अरुणाचल, मणिपुर, मिजोरम, सिक्किम, त्रिपुरा, हिमाचल व उत्तराखंड इस श्रेणी में शामिल हुए, जिसके तहत इन्हें केंद्र द्वारा मिलने वाली राशि में 90 फीसदी अनुदान व 10 फीसदी राशि गैर-ब्याज ऋण के रूप में देने की व्यवस्था है। सच है कि भौगोलिक और आर्थिक-सामाजिक विषमताओं के कारण आज भी अनेक राज्य विकास की मुख्यधारा से दूर हैं। वहां बुनियादी ढांचे का अभाव है। इस लिहाज से यह प्रावधान राजनीतिक नहीं, जमीनी हकीकत के अनुरूप तय हों, तो ज्यादा व्यावहारिक होगा।

यह पहली बार नहीं, जब किसी राज्य ने विशेष राज्य की मांग पर केंद्र से गुहार लगाई या उसे लेकर राजनीतिक कदम उठाए हों। 2009 में पहली बार बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने ऐसी ही मांग की थी। ओडिशा भी इस मांग पर लगातार कायम है। वर्ष 2013 में जद-यू ने इस पर दिल्ली में एक बड़ी रैली भी की थी, जिसके बाद यूपीए सरकार ने तत्कालीन मुख्य आर्थिक सलाहकार रघुराम राजन की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई थी, जिसने राज्यों को धन देने हेतु बहुआयामी सूचकांक यानी एमडीआई की नई प्रणाली अपनाने का सुझाव दिया था। दुर्भाग्यवश दिसंबर 2014 में वाई वी रेड्डी की अध्यक्षता वाले 14वें वित्त आयोग की सिफारिशों में विशेष राज्य की व्यवस्था पर पाबंदी लगाकर केवल नॉर्थ ईस्ट व पहाड़ी राज्यों को ही यह दर्जा देने की व्यवस्था पर मुहर लगाकर कर में हिस्सेदारी बढ़ाई गई। इसके तहत राज्यों के लिए कर हस्तांतरण को 32 से बढ़ाकर 42 फीसदी करना राहतपूर्ण जरूर रहा, पर गरीब, पिछड़े और बीमारू राज्यों के समुचित विकास के लिए यह नाकाफी है।14वें वित्त आयोग की अनुशंसा यूपीए सरकार के दौरान ही हुई थी। जहां तक बिहार की बात है, सन 2000 में विभाजन के साथ इसका प्राकृतिक संसाधन इसके हाथ से निकल गया। मौजूदा शासन में भारी विकास के बावजूद प्रति व्यक्ति आय की दृष्टि से बिहार का हाल उत्साहवद्र्धक नहीं है। ऐसे में, बिहार को विशेष राज्य का दर्जा वक्त की मांग है। लंबे अंतराल के बाद केंद्र व राज्य में एनडीए सरकार है। ऐसे में, उम्मीद की जानी चाहिए कि 15वें वित्त आयोग में विशेष राज्य के दर्जे की सिफारिश फिर से बहाल होगी और बिहार समेत अन्य जरूरतमंद राज्य विकास की मुख्यधारा में शामिल होंगे।

---

***Date: 13-03-18***

# राजनीति में अपराध

**संपादकीय**

भारतीय राजनीति का विद्रूप दिखाता यह नया आईना है। यह भारतीय राजनीति को अपराधीकरण से मुक्त करने की कई दशक पुरानी बहस का नया प्रस्थानबिंदु भी है, जब आधिकारिक आंकडे बता रहे हैं कि हमारी संसद और विधान मंडलों के एक तिहाई से ज्यादा सांसद और विधायक गंभीर रूप से दागी हैं। सरकार ने इन आंकड़ों के साथ सुप्रीम कोर्ट में हलफनामा दाखिल कर इनका निपटारा फास्ट ट्रैक अदालतों में एक साल के अंदर करने की वचनबद्धता दोहराई है। आंकड़ों के अनुसार, देश में सांसदों-विधायकों की कुल संख्या 4,896 है और इनमें से 1,765 सांसदों और विधायकों पर 3,045 मामलों में आपराधिक मामले चल रहे हैं। इनमें सबसे ऊपर उत्तर प्रदेश है, उसके बाद तमिलनाडु, बिहार, पश्चिम बंगाल, आंध्र, केरल और कर्नाटक हैं। महाराष्ट्र और गोवा के आंकडे इसमें शामिल नहीं हैं। शुरुआत 2014 में सुप्रीम कोर्ट के उस आदेश से हुई थी, जब एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म (एडीआर) की याचिका पर कोर्ट ने सरकार को फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाकर मामले समय-सीमा में निपटाने का आदेश दिया था। केंद्र ने तब इस पर 12

फास्ट ट्रैक कोर्ट बनाने की बात की थी, और 780 करोड़ रुपये का बजट भी आबंटित किया गया था, लेकिन ताजा आंकड़ों के बाद लगता है कि अब दोगुनी फास्ट ट्रैक अदालतें बनानी होंगी।

भारतीय राजनीति में शुचिता की बहस पुरानी है,मगर इस पर ईमानदारी से कभी कुछ नहीं हुआ। **प्रयास** कई हुए, लेकिन उन पर राजनीति हावी हो गई। पूर्व प्रधान न्यायाधीश एमएन वेंकटचलैया ने तो बहुत पहले ही 'नेशनल कमीशन टु रिव्यू द वर्किंग ऑफ द कांस्टीट्यूशन' की अध्यक्षता करते हुए पांच साल से अधिक की सजा की स्थिति में चुनाव लड़ने से रोकने और हत्या, दुष्कर्म, तस्करी जैसे जघन्य मामलों में दोषी ठहराए जाने पर **ताउम्र** प्रतिबंध का सुझाव दिया था। वीरप्पा मोइली की **अध्यक्षता** वाले दूसरे प्रशासकीय सुधार आयोग व बाद में विधि आयोग ने भी कई सिफारिशें कीं। चुनाव आयोग ने भी काफी पहले स्पष्ट **किया** था कि निचली अदालत द्वारा दोषी ठहराया जाना ही चुनाव लड़ने से **अयोग्य** करने को पर्याप्त होगा। इतना सब हुआ, पर वाकई कुछ नहीं हुआ।

यह भारतीय राजनीति का विद्रूप ही है कि हमारे यहां शासन तंत्र की बागडोर जिन जन-**प्रतिनिधियों** के हाथों में है, उनका चयन योग्यता पर नहीं, बल्कि जाति, वर्ग, धनबल और बाहुबल के आधार पर होता है। जेल जाने और बेल पर भी बाहर आने पर जश्न मनता है। जो जितना धन-बलशाली हो, उतना ही बड़ा जश्न। यही उसकी ताकत का पैमाना बनता है। असल **जरूरत** इस विद्रूप पर नियंत्रण पाने की है, शायद ताजा प्रयास इसके प्रति **आश्वस्त** कर सके। एक बात जरूर देखने की होगी कि ऐसी **त्वरित** कार्रवाई शुचिता के नाम पर किसी नई अराजकता का अवसर न बन जाए। यह भी कि मामला सिर्फ फास्ट्र ट्रैक कोर्ट की तेजी तक सीमित न रहे, ऊपरी अदालतों में भी वैसी ही तेजी से सुनवाई और फैसले हों। राजनीति की शुचिता का सपना तभी सही **मायनों** में पूरा हो सकेगा। सवाल यह भी है कि क्या यह सब वाकई कानून से **खत्म** होगा? दरअसल, यह काम राजनीतिक दलों को करना होगा। उन्हें सोचना होगा कि क्या वे वाकई ऐसा चाहते हैं? जिस दिन उनकी **इच्छाशक्ति** आकार ले लेगी, कानून को बीच में आने की **जरूरत** ही नहीं पडेगी।

---

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

***Date: 13-03-18***

# Friends to partners

## *Macron needs to implement domestic reforms for Indo-French ties to flourish.*

***Miniya Chatterji the writer is chief sustainability officer at Jindal Steel & Power Ltd., and a Global Leadership Fellow alumna of the World Economic Forum.***

While working in Paris in the office of Jacques Chirac, the President of the French Republic of that time, I travelled to India to gather talking points for an upcoming presidential visit. During a bilateral meeting for this, Ratan Tata told me, "Indians generally like the French. Amongst the French businessmen I deal with, many are my friends. We are easily able to understand and be appreciative about each other but we have not succeeded in transforming these friendships into business."Not much has changed. There have been rich cultural exchanges and expressions of mutual appreciation between India and France in the past decade while the per cent change (YOY) in total trade between India and France has plunged from +30.07 per cent in 2006 to a dismal +0.37 per cent in 2016.

In 2017, around 5,500 Indian students and scientists found it worth their while to study in France. Whereas almost 15,000 students went to the UK during the same period. Many of France's top universities, including the one I studied and now teach at, offer courses in English but perhaps few Indians know this. An education in France is also several times cheaper than a degree in the UK or the US but ultimately Indian students go where they get more jobs for their buck.Tata had said to me in 2005, "The French often lack the will to give the final push towards concretising deals. It is necessary to act because things move quickly. But with the French, things get diverted." In 2007, Chirac's lacklustre presidency ended, but France had little respite even after. The country suffered a decade of subsequent obscure political leadership, with a GDP growth rate that hardly budged above one per cent. Any attempted reform by the government only led to the French going on strike, hindering the roll out of any substantial changes.For instance in 2018, after a year-and-a- half of to and fro with the French government authorities in Paris to pick up my "talent passport" visa — a French green card, so to speak, to enable me to incorporate a company in France — that the French embassy in New Delhi had generously offered me and even processed (it took six months), I am yet to set my eyes on it. The French authorities in Paris recently told their colleagues at the Embassy in New Delhi that their challenge for granting me the visa was that I was not residing in France. It is a baffling chicken and egg situation.

France was the first country in the West with which India established a strategic partnership and the first with which India initiated a strategic dialogue after our 1998 nuclear tests when France refrained from imposing sanctions on us. It has ceased arming Pakistan many moons ago. Leaders from no other country have been honoured as many times as chief guests at India's Republic Day celebrations. Besides education and culture, France and India have also built a long-standing cooperation in nuclear, defence and space. More recently, the vision for the International Solar Alliance was established jointly by the two countries.President Emmanuel Macron's March 2018 visit to India was much awaited precisely because there is so much for him to do. Political understanding is good to nurture, but how can he transform that into greater opportunities for the people of India and France? I had met him a few years ago when he was still Minister of Economy of France, and he seemed to me to be the ideal candidate for this task.

For example, climate change has emerged — and rightfully so — as a new cornerstone of the relationship between Prime Minister Narendra Modi and President Macron. Both countries now need to leverage this political alignment towards creating meaningful joint ventures, and develop technology and knowledge exchanges in this field for all to benefit.France is ahead on the curve of developing technologies that minimise the environmental impact of manufacturing processes. These are technologies that the Indian manufacturing industry can learn and adopt as the latter gets subjected to strict emission limits and stringent compliances by the current Indian government. Moreover, the climate change industry is estimated to reach a value of $1 trillion by 2020, presenting an opportunity for France and India.The protectionist stance of Brexit and Donald Trump also presents an opportunity to France. French universities can attract the best of Indian talent. In the realm of literature too, why not make greater collaborations? This will boost the publishing industry and also foster a rich exchange of ideas across the two countries that are both known for great literary writing.Most importantly, Macron also needs to make reforms on his home turf in order to transform friendships into greater economic opportunity for all. The heavy bureaucracy in France must be loosened so it doesn't stifle the life out of potential incoming investments. French labour laws need to be reformed such that corporations are more agile when doing business abroad. And diplomatic agencies can be more confident of India's friendship and appreciation for France, so that more efforts can instead be directed towards joint action.

जनसत्ता

Date: 13-03-18

# जरूरत की ऊर्जा

**संपादकीय**

ऊर्जा संकट से निपटने के लिए अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन ने जो पहल की है, वह पूरी दुनिया को इस गंभीर समस्या से निजात दिलाने की दिशा में एक बड़ा कदम साबित हो सकती है। चाहे विकसित हों या विकासशील देश, ऊर्जा का गंभीर संकट सबके सामने है। विकासशील देशों के सामने यह चुनौती ज्यादा बड़ी है। ऐसे में अगर भारत अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन की स्थापना से लेकर उसे लक्ष्य तक पहुंचाने के लिए नेतृत्व की भूमिका में आए तो यह एक बड़ी उपलब्धि होगी। दिल्ली में अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन के पहले सम्मेलन में शिरकत करने वाले बासठ देशों ने ऊर्जा की जरूरतों को पूरा करने के लिए सौर ऊर्जा का उत्पादन और इस्तेमाल बढ़ाने की प्रतिबद्धता जताई है। अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन की अहमियत इसलिए भी बढ़ गई है कि पेरिस समझौते के तहत सदस्य देशों को सौर ऊर्जा के इस्तेमाल, उसके लिए शोध, परियोजनाओं के लिए पैसे जैसी सारी जरूरतें इसी के जरिए पूरी की जाएंगी। इसका मुख्यालय गुरुग्राम में होगा, जिसके लिए भारत ने छह करोड़ बीस लाख डॉलर दिए हैं। इस सम्मेलन को अमली जामा पहनाने के पीछे सबसे बड़ी भूमिका फ्रांस की रही है, जिसने इस संगठन को खड़ा करने में भारत के साथ मिल कर काम किया। इस मौके पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुअल मैक्रों ने मिर्जापुर जिले में उत्तर प्रदेश के सबसे बड़े सौर ऊर्जा संयंत्र का लोकार्पण भी किया। गौरतलब है कि इस संयंत्र को फ्रांस की कंपनी ने ही बनाया है। इसमें एक करोड़ तीस लाख यूनिट बिजली हर महीने बनेगी।

भारत के समक्ष आज सबसे बड़ी चुनौती सवा अरब से ज्यादा आबादी को सस्ती बिजली मुहैया कराने की है। अभी देश में ज्यादातर बिजली का उत्पादन कोयले पर निर्भर है। बिजलीघरों को कोयले की कमी की समस्या से जूझना पड़ रहा है। खासतौर पर गरमी के मौसम में बिजली का संकट तब और बढ़ जाता है जब मांग की तुलना में बिजलीघर उत्पादन नहीं कर पाते और इसके पीछे सबसे बड़ा कारण बिजलीघरों को समय पर पर्याप्त कोयला नहीं मिल पाना है। जाहिर है, आने वाले वक्त में संकट और गहरा सकता है। ऐसे में भारत के लिए ऊर्जा का वैकल्पिक स्रोत तलाशना जरूरी है। सौर ऊर्जा इसका सबसे सस्ता और कारगर विकल्प साबित हो सकती है। भारत ने अगले पांच साल में सौर ऊर्जा से पौने दो खरब वाट बिजली बनाने का लक्ष्य रखा है। इसके लिए तिरासी अरब डॉलर की जरूरत पड़ेगी। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए प्रधानमंत्री ने सौर परियोजनाओं के लिए सस्ता और बिना जोखिम वाला कर्ज देने की भी वकालत की।सौर ऊर्जा का इस्तेमाल हर लिहाज से लाभदायक है। इससे बनने वाली बिजली न केवल सस्ती होगी, बल्कि इससे इन कारखानों से होने वाले प्रदूषण से भी निजात मिलेगी। कोयले से चलने वाले बिजलीघर जिस कदर राख और धुआं छोड़ते हैं, वह पर्यावरण के लिहाज से और जीवन के लिए खतरनाक है। सौर ऊर्जा के इस्तेमाल से कोयले जैसे प्राकृतिक स्रोत पर निर्भरता कम या फिर खत्म होगी। सम्मेलन में प्रधानमंत्री मोदी ने जो दस सूत्री कार्रवाई योजना पेश की है, उसमें सभी राष्ट्रों को सस्ती सौर प्रौद्योगिकी मुहैया कराना, ऊर्जा मिश्रण में फोटोवोल्टिक सेल से उत्पादित बिजली का हिस्सा बढ़ाना, सौर ऊर्जा परियोजनाओं के लिए नियमन और मानदंड बनाना, बैंक कर्ज के लिए सौर परियोजनाओं के लिए सलाह देना और विशिष्ट सौर केंद्रों का नेटवर्क बनाना शामिल है। सौर नीतियों, परियोजनाओं और राष्ट्रीय सौर मिशन जैसी पहलकदमी के जरिए अगर आम लोगों तक सौर ऊर्जा का फायदा पहुंचता है तो निश्चित ही भारत को भविष्य में ऊर्जा संकट से निपटने में कामयाबी मिलेगी।